एक स्कूल मैनेजर की डायरी के कुछ पन्ने–XV

हाशिये पर इल्म और बच्चे, क्या ज़िम्मेदार है मूल्यांकन?

फ़राह फ़ारूक़ी

यह हैरानी तो मुझे रही है कि हमारे इतने ज़हीन बच्चे पढ़ाई-लिखाई में अपना सिक्का क्यों नहीं जमा पाते हैं। बहुत से कारण तो साफ़ हैं, जैसे स्कूल की तरफ़ से सही और भरपूर मदद की कमी, बच्चों के सामाजिक-आर्थिक हालात, सही रहने-पढ़ने की जगह की कमी, मज़दूरी करने की मजबूरी, स्कूल में ग़ैर-हाज़िरी वग़ैरा। इन सब दुश्वारियों के बावजूद बच्चों की बारीक नज़र, रोज़मर्रा की ज़िन्दगी को समझ पाने की क़ाबलियत, बातचीत में शाइस्तगी क्यों उन्हें तालीम की दुनिया में मदद नहीं करती, यह बात ग़ौर तलब है। यह समझने के लिए हमें दो चीज़ों को समझने की ज़रूरत है- हम इल्म किसे मान रहे हैं? और इस इल्म का मूल्यांकन कैसे कर रहे हैं? इस लेख में मैं इन्हीं सवालों से जुड़े हुए और कई सवाल उठा रही हूं, जैसेः क्या हम हाशिये के लोगों के इल्म को भी हाशिये पर डाल देते हैं या फिर, क्योंकि इल्म हाशियों की नज़र होता है तो लोग भी हाशियों की रौनक़ बन जाते हैं? क्या हिम्मत और सहारा देना बच्चों को मरकज़ की तरफ़ छलांग लगाने में मदद कर सकता है?

इतिहास क्लब

ऊपर दिए गए सवालों पर बातचीत मैं इतिहास क्लब के ज़रिए से करूंगी जो कि स्कूल में बनाया गया था। अफ़सोस, यह क्लब जारी नहीं रह सका लेकिन हम इस तजुरबे से बहुत कुछ सीख पाए। इस क्लब को हमने दो लोगों की मदद से शुरू किया था- अनिल सेठी और मीनाक्षी छाबड़ा। नवीं से बारहवीं तक के बच्चे अपनी मर्ज़ी से क्लब की सरगर्मियों में हिस्सा ले सकते थे। तक़रीबन 35 बच्चों ने इस क्लब में हिस्सा लिया। मैं अपने पांचवें लेख में बच्चों के समूहों की बात कर चुकी हूं। उस लेख में मैंने तीन तरह के समूहों की बात की थी। एक, वे बच्चे जिनके लिए ज़िन्दगी की जद्दोजहद से दूर स्कूल एक मस्ती करने की जगह है। दूसरा समूह जो मस्ती के अलावा पढ़ाई की तरफ़ कभी न कभी रुख़ कर लेता है। तीसरा समूह जो सारी

परेशानियों दुश्वारियों के बावजूद पढ़ाई की कोशिश करता है। आपको यह जानकर हैरानी नहीं होगी कि अपनी खुशी से क्लब से जुड़ने वाले बच्चे ग्रुप तीन के थे जो पढ़ने-सीखने का मौक़ा नहीं छोड़ना चाहते थे। इनमें से काफ़ी बच्चे वे हैं जिनके परिवार पिछले एक दशक में पढ़ाई और कमाई की ख़ातिर बिहार और उत्तर-प्रदेश के इलाक़ों से दिल्ली आए। यह बच्चे पढ़ने-सीखने की पुरज़ोर कोशिश करते हैं लेकिन हालात हैं कि पीछे धकेलने में लगे रहते हैं। इनके असात्ज़ा के हिसाब से चंद बच्चों के अलावा सभी के बारे में कुछ अच्छी राय नहीं है। ग्रुप एक और दो के शरारती-तीसमारखां बच्चों ने कम ही तादाद में इस सरगर्मी में हिस्सा लिया। स्कूल के कई सामाजिक विज्ञान पढ़ाने वाले अध्यापकों ने भी इस क्लब में शिरकत की। क्योंकि इस क्लब के लिए हम लम्बा टाइम छुट्टी वाले दिन ही निकाल पाते थे इसलिए सिर्फ़ एक ही टीचर आख़िर तक जुड़ी रहीं, क्योंकि सभी को छुट्टी के दिन आना क़ुबूल नहीं था।

शुरू में जुड़े बच्चों के साथ, क्लब का ताअरुफ़ देने का काम अनिल ने किया। इस बात पर रौशनी डाली गई कि तारीख़ के आख़िर माइने क्या हैं, तारीख का मतलब सिर्फ़ राजाओं, जंगों, मुल्कों के हादसों से परे बच्चों की अपनी ज़िन्दगी परिवार और गली-कूचे हैं, और इनकी भी अपनी तारीख़ है जो लगातार रची जा रही है और वक़्त के पन्ने पलटे जा रहे हैं। इस तारीख़ को बनने-पिरोने का काम क्लब में होगा और बच्चे ख़ुद तारीख़ लिखेंगे। बच्चों से बातचीत करके तीन विषय चुने गए। एकः परिवार-ख़ानदान, दूसराः गांव, मोहल्ला, इलाक़ा और तीसराः स्कूल। इन तीनों का इतिहास ढूंढ़ने और लिखने की कोशिश में हम जुट गए। यह बता देना ज़रूरी है कि हम लोग बच्चों से कुल मिलाकर पांच बार 2 से 3 घंटों के लिए मिल पाए होंगे। काम करने और सीखने की गुंजाइश बहुत थी लेकिन जुड़े हुए लोगों की अपनी मजबूरियां थीं और स्कूल इस काम को आगे बढ़ाने में सक्षम नहीं हो पाया बल्कि इसकी अहमियत ही नहीं समझी इसीलिए इसके लिए वक़्त भी नहीं निकाल पाया।

क्लब का माहौल

काम क्या और किस प्रकार किया गया इस ज़िक्र से पहले मैं क्लब के मोहब्बत और इज़्जत भरे माहौल की बात ज़रूर करना चाहूंगी। जब समूह के तौर पर हम बच्चों से मिले, अनिल ने अपने समूह के सभी बच्चों से हाथ मिलाया और इत्मिनान से, उन्हीं के बीच में, फ़र्श पर बैठ गए। हर एक ने अपना ताअरुफ़ दिया, ताअरुफ़ भी बड़ा रोचक था। जब कोई बच्चा अपने आबाई वतन के बारे में बताता, (जैसे अगर बच्चा कहता कि वह बिहार के सीतामढ़ी का है) तो अनिल उस जगह की, उसके इतिहास या बोली की कोई ख़ासियत बता देते। बच्चों को न सिर्फ़ इसमें मज़ा आया बल्कि खुशी और इत्मिनान उनके चेहरों पर झलक रहा था। यूं भी कहा जा सकता है कि अपने से जुड़ी चीज़ों की खूबियां और ख़ासियतें सुनकर उनके चेहरे दमक रहे थे। इसी तरह मीनाक्षी के रवैय्ये से झलक रहा था कि वे बच्चों की हर एक बात को एहमियत दे रही हैं, ग़ौर से सुन रही हैं, सराह रही हैं और प्रोत्साहित कर रही हैं। बच्चे ख़ुश भी थे, कुछ हैरान से भी थे। शायद ही इस मोहब्बत और इज़्ज़त का मुज़ाहिरा किसी स्कूल से जुड़े फ़र्द ने इनसे कभी किया हो। 'अपने' बच्चों के साथ यह रवैय्या देखकर मैं तो गदगद हो गई। अपने-आपको यूं किसी समूह या इदारे का परचम उठाए समझना अगर एक तरफ़ ज़िम्मेदारी का एहसास दिखाता है वहीं शायद यह ख़याल भी दर्शाता है कि आप ही उस 'अपने' समूह के दर्द-तकलीफ़ों और जद्दोजहद को 'औरों' के मुक़ाबले में ज़्यादा जानते-समझते हैं। ख़ैर, मुझे लगता है कि इस माहौल का बड़ा हाथ है बच्चों को लिख पाने की हिम्मत देने में। कुछ बच्चों ने जोड़ियों में काम किया और काफ़ी ने अकेले ही मालूमात हासिल करके लेख लिखे। जिन विषयों पर समूह में काम मुमकिन था उन पर भी बच्चों ने अकेले ही काम करना पसन्द किया। असल में समूह में काम किस तरह किया जाए यह समझने में, सराहने में और सीखने में वक़्त लगता है और हमारे बच्चों को स्कूल में इसके मौ़के कम ही मिल पाते हैं।

हमारे इतिहासकार बच्चे

दो बच्चों ने परिवार और इलाक़े के बारे में लिखा और उनके निबंधों के कुछ अंश यहां मौजूद हैं। ऐसा नहीं है कि मैंने सोचकर यह लेख चुने हों कि आपके सामने सबसे बेहतर लेख प्रस्तुत कर सकूं। और भी कई इनकी बराबर या इनसे बेहतर लेख लिखे गए थे। तारीख़ क्लब के ताअरुफ़ के बाद, एक क्लास में यह तय पाया कि कौन किस विषय

पर काम करेगा। इसके बाद एक दिन की लम्बी (2-3 घंटे) क्लास में बच्चों से गुफ़्तगू हुई कि उन्हें चुने गए विषय पर सामग्री कैसे इक्ट्ठा करनी है। यह भी चर्चा हुई कि किस तरह कड़ियां बन सकती हैं या फिर तथ्य और सबूत किस तरह जोड़े जाएं। इससे अगली कक्षा में बच्चों ने जो कुछ लिखा, उस पर बातचीत हुई और राय-मशवरे दिए-लिए गए। 9वीं कक्षा के मेहताब मियां क्लब की पांचवीं बैठक में तक़रीबन 1200 शब्दों का लेख लिखकर लाए, जिसके कुछ अंश यहां मौजूद हैं। अंश देने से पहले यह बताना ज़रूरी है कि दोनों ही अंश कच्चे ड्राफ़्ट से लिए गए हैं। अगर हमारे पास वक़्त-मौक़ा होता तो बच्चों को कई तरह के स्रोतों से अवगत करवाते और उनके लेख का कहीं बेहतर रूप मुमकिन होता।

पहला लेख

मेहताब आलमः (कक्षा-नवीं) बिहार का ज़िलाः

मेरा नाम मेहताब आलम है। अपने परिवार का इतिहास जानने के लिए मैंने आज से कुछ 50-60 वर्ष पूर्व का अध्ययन किया और यह जानने का प्रयास किया कि एक संयुक्त परिवार (Joint Family) किन कारणों से अलग होती है। यह निम्न कारणों से हो सकती हैः

i) क्या यह ग़रीबी के कारण होता है?
ii) क्या यह बेरोज़गारी के कारण होता है?
iii) क्या यह महिलाओं की प्रतिक्रिया के कारण होता है?

आज से 80-85 वर्ष पूर्वः

अध्ययन करने से यह पता चला कि अंग्रेज़ों के समय से ही इस गांव के लोग अपने परिवार को छोड़कर अलग हो जाते थे। इसका प्रमुख कारण यह था कि यहां पहले से ग़रीबी थी और ऊपर से अंग्रेज़ों द्वारा जबरन नील की खेती करवाना। इससे लोग परेशान होकर अपने घर का ख़र्च पूरा करने के लिए अपने परिवार से अलग चले जाते थे। आज़ादी के बाद भी यह सिलसिला ऐसे ही चलता रहा क्योंकि अब लोग अपने जीवन को उच्चतम स्तर पर लाना चाहते थे जो गांव में उसे नहीं प्राप्त था जैसे रोज़गार और शिक्षा का केन्द्र। ऐसे ही अलग होते-होते इस गांव की जनसंख्या जो कभी 4000 थी अब 1000-1500 रह गई।

घर का पहला व्यक्ति घर से अलग हुआः

मेरे घर का पहला व्यक्ति मेरे बड़े वाले चाचा, घर से अलग हुए। जिसका कारण यह था कि एक तो घर के सदस्यों की तादाद अधिक थी और छोटे वाले भाई-बहन की पढ़ाई के ख़र्च को पूरा करने के लिए उन्हें शहर की ओर निकलना पड़ा।

वह केवल 5वीं कक्षा पढ़े और फिर वह धनबाद गए और 1964 में राजमिस्त्री का काम किया। और फिर बाद में 16 अगस्त 1965 में दिल्ली चले गए। और साइकिल की दुकान पर काम किया और फिर साऊथ एक्सटेंशन में चले गए और थोड़ी बहुत इंग्लिश सीखी। आज वह एक लिमिटेड कम्पनी में सुपरवाइज़र है।

घर से अगल होने का सिलसिला यहीं रुका नहीं था। जब मेरे बड़े वाले चाचा गए तो वह कुछ दिनों बाद अपने भाइयों को भी ले गए और जिसमें से तीन भाई जे.के. टायर कम्पनी में चले गए और उनकी पोस्टिंग अब राजस्थान में है। अब वह वहीं रहते हैं और दो भाइयों ने दिल्ली में अपना बिज़नेस खोला था।

मैं इस बात से ऊपर दिए गए अंशों पर चर्चा शुरू करना चाहूंगी कि यह वही बच्चे हैं जिनसे न तो कोई अपेक्षा है और न ही उन्हें किसी क़ाबिल समझा जाता है। ऊपर दिए गए अंश तक़रीबन 1200 शब्दों के लेख से लिए गए हैं। इस लेख की शुरुआत बच्चा समझे-बूझे अनुमान लगाने और सवाल उठाने से करता है। यह सवाल उसने परिवार वालों से शुरुआती बातचीत के बाद उठाए हैं। शुरू में ही खोज प्रक्रिया को सवालों में बांध लेना और फिर लेख की शुरुआत भी उन्हीं सवालों से करना एक अच्छा क़दम माना जा सकता है। उसके बाद वह अपनी गांव की आबादी कम होने की वजह बयान करता है। आप देख ही सकते हैं कि यह बयान पारिवारिक बदलाव और कशमाकश को सामाजिक-राजनैतिक स्थिति से जोड़ता है। पूरे लेख को मेहताब ने तसव्वुरात के छोटे समूहों में बांटा है। आगे वह इस बात की तफ़सील पेश करते हैं कि किस तरह उनके परिवार के पहले शख़्स ने परिवार की आर्थिक मदद की ख़ातिर हिज़रत (पलायन) की। उसमें वह अपने चाचा के हाथ-पैर मारने और नए शहर में अपनी जगह बनाने की तफ़सील बयान करते हैं।

ऊपर दिए गए लेख का मूल्यांकन आप कई आधार पर कर सकते हैं। यह आधार हो सकते हैः विषय को सवालों में बांधना, कड़ियों को जोड़कर एक व्यापक तफ़सील तैयार करना, तसव्वुरात की दर्जाबंदी, वक़्त के साथ बदलाव दर्शा पाना, बात की अदाइगी में सफ़ाई और बारीकी, वग़ैरा। मेहताब की तरह और भी कई बच्चों ने अपने घर-ख़ानदान की तारीख़ पर लेख लिखे। बच्चों के परिवार की तारीख़ में इतिहासकारों को रुचि हो सकती है और वह तारीख़ किस तरह एक बड़े परिप्रेक्ष्य से जुड़ी है यह बात बच्चों के लिए न सिर्फ़ मज़ेदार थी बल्कि उन्हें अपने परिवार की तारीख़ एक गर्व का एहसास दे रही थी। खुद उनकी अपनी 'अदना' सी हैसियत और वह अपने गुमनाम से घर-ख़ानदान की तारीख़ लिख रहे थे, थी तो ये दिलचस्प बात। गर्व का एहसास उन्हें खुलकर लिखने-कहने की हिम्मत दे रहा था। मुझे लगता है कि इस तरह से तारीख़ में और बदलाव में अपनी स्थिति को समझने से उन बच्चों को, जिन्हें खुद उनके पिछड़ेपन के लिए ज़िम्मेदार ठहरा दिया जाता है बड़ी हिम्मत मिलती है। बच्चे ढांचों के षड़यंत्र और ग़ैर-बराबरी के बीच रिश्ता कुछ हद तक समझ पाते हैं। एक तफ़सीली लेख लिख पाना अपने-आपमें बहुत हिम्मत बख़्शता है। इस तरह लिखना-सीखना बच्चों को स्कूल से आगे की पढ़ाई की ओर बढ़ने की हिम्मत और कौशल देता है।

शर्त है बराबरी हो, एक-दूसरे से सीख सकते हैं

मेहताब मियां ने अपने तीसरे सवाल के बारे में कुछ नहीं लिखा। पूछने पर एक अच्छी बहस ज़रूर की। उनका अटल यक़ीन था (शायद अभी भी है) कि महिलाएं घर तोड़ने के लिए ज़िम्मेदार होती हैं। अपनी चाची का उदाहरण देकर समझाने की कोशिश भी की कि किस तरह वह चाचा से सुसराल वालों की लगाई-बुझाई करके उनके और कान भर के बिहार से चाचा के पास दिल्ली आ गई। जब मैंने महिलाओं का झण्डा थामकर कुछ ज़्यादा ही पुरज़ोर तरीक़े से मुख़ालफ़त की तो बेचारे कुछ ढीले पड़ गए। कई बार न चाहते हुए भी हम बच्चों को ग़ैर-बराबरी का एहसास दे देते हैं या अपनी सत्ता का एहसास करा देते हैं। अच्छी बातचीत और बहस का माहौल बनाए रखने के लिए बच्चों की बात सुननी और उन्हें इसकी एहमियत का एहसास दिलाना ज़रूरी है। ख़ैर, मेहताब मियां ने यह भी दलील दी कि सारे टी.वी. सीरियल में औरतें षड़यंत्र रचती ही दिखाई जाती हैं। उनका मानना था कि लड़कियां, औरतें प्राकृतिक तौर पर साज़िश करने वाली और चालबाज़ होती हैं जिसकी वजह से घर भी टूटते हैं। जहां एक तरफ़ खुला-इज़्ज़त का माहौल हमें एक मौक़ा देता है कि हम बच्चे के रूढ़िवादी या ग़ैर-मुनासिब विचार को बेख़ौफ़ बातचीत द्वारा भांप सकते हैं, वहीं हमारी सत्ता का एहसास बच्चों को अपने खोल में घुसने के लिए मजबूर कर सकता है। यह भी होता है कि जब हम बात को नकारने से शुरू करते हैं तो कई बार हम उसके बहुत अहम् पहलुओं को नज़रअन्दाज़ कर बैठते हैं। बाद में सोचने पर ख़्याल आया कि सत्ता की निचली सीढ़ी, मर्द हो या औरत, हालात पर अपना कुछ क़ाबू रखने/पाने के लिए या अपनी आवाज़ सुनी जाने की कोशिश में चीज़ों को तोड़-मरोड़ कर पेश करने पर मजबूर हो ही सकता है। ऐसे परिवारों में जहां पितृसत्ता का बोलबाला हो, मेहताब की चाची की तरह अपना जायज़ हक़ भी पाने के लिए झूठ-सच का सहारा तो लेना पड़ सकता है। यह एक मौक़ा हो सकता था जेण्डर के सवाल को गहराई से समझने का जो हमने खो दिया। जब टीचर और बच्चे खोज के दौरान सीखने के लिए एक-दूसरे की उंगली थामते

हैं तो दोनों के लिए ही सीखने-सिखाने के लिए बहुत कुछ होता है। इस क्लब के माध्यम से हमने इलाक़े के लोगों के, पलायन के, समाजी जद्दोजहद के बारे में बहुत कुछ सीखा। यह इल्म किताबों में बन्द नहीं था बल्कि एक मायने में किताबी इल्म को रौशन कर रहा था। साथ ही बच्चों को हाशिये से मरकज़ की तरफ़ क़दम बढ़ाने की ताक़त दे रहा था। जब हमारे तजुरबों और इल्म को समाज मे जगह मिलती है या फिर इसे जाना-माना जाता है तो यह बहुत हिम्मत देता है।

दूसरा लेख

दूसरे समूह के बच्चों ने स्कूल के आसपास की कई इमारतें और जगहों को चुना और इस पर अच्छा काम किया। यह कहना यहां ज़रूरी है कि हमारे बच्चे अपने पड़ौस और आसपास को माली तौर पर बेहतर बच्चों से कहीं ज़्यादा अच्छी तरह जानते हैं। आप उनके साथ एक बार दौरे पर तो निकलिए। सियासी दांव-पेच और खेलों से लेकर, कुश्ती के अख़ाड़ों की सियासत, ज़ायके के रंग, मज़दूरों के पसीने की बू, साहूकारों के नख़रे, सुविधाओं की असुविधा, गली-कूचों के मसाइल, आमदनी के ज़रिए, यहां तक कि घरों की हलचल और सामाजिक-आर्थिक ढांचों से इसका जुड़ाव, इन सबका जायज़ा आपके पेशे ख़िदमद होगा। आप ही बताइए कि यह इल्म नहीं तो क्या है? इसे हम यूंही नकार देते हैं और इसके साथ-साथ बच्चों को भी हाशियों की नज़र कर देते हैं। ग़लती हमारी है, ज्ञान जो किताबों में दर्ज है और जो इनकी रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में बसा है उसे पहचान ही नहीं पाते, दोनों के बीच ताल्लुक़ दिखा पाना तो दूर की बात ठहरी। इस तरह बच्चों के घने तजुरबों में रचा-बसा इल्म हाशियों की नज़र हो जाता है और साथ ही बच्चों को भी समेट लेता है। जबकि बहुत से सोने के पिंजरे में रहने वाले लोग, ज़मीनी हक़ीक़तों को जाने बग़ैर, टैगोर के तोते की तरह नीरस मीनार में बन्द तालीम की पोथियां चबाकर बुद्धिजीवी कहलाएंगे। पोथियां निगले बग़ैर कहां कोई किसी क़ाबिल हुआ है। जबकि यह भी सच है कि हमारे बच्चे अगर पोथियां निगल लेंगे तो वे टैगोर के तोते की तरह इस दुनिया से कूच नहीं करेंगे बल्कि अपने मधुर संगीत से समाज के ज़ख्मों पर मरहम ज़रूर लगा पाएंगे।

हां, तो इस समूह के बच्चों ने आसपास की इमारतों, स्थानों के बारे में सूचना इक्ट्ठा की और कई ने तक़रीबन एक-डेढ़ हज़ार शब्दों के लेख लिखे। अरहम के लेख से कुछ अंश यहां मौजूद हैं। वह दसवीं जमात में पढ़ रहे थे। स्कूल के पास एक मिल चलता था जो दिल्ली क्लॉथ मिल के नाम से जाना जाता था, मियां अरहम ने उसी के बारे में लिखा है। यह मिल तो कब का बन्द हो गया है लेकिन यह पूरा इलाक़ा ही अब डी.सी.एम. के नाम से मशहूर है। अंश इस प्रकार हैः

दिल्ली क्लौथ मील जिसे डी.सी.एम. के नाम से जाना जाता था दिल्ली क्षेत्र में स्थापित थी। जिसे राजस्थान के ताजिर ने बनवाया था। यह मील बहुत बड़ी थी जिसके कारण इसमें बड़ी संख्या में कपड़ा बनाया जाता था। मील में बहुत अधिक संख्या में लोग काम किया करते थे। ये लोग अलग-अलग क्षेत्र से आए हुए थे। इन लोगों के रहने के लिए मकान दिए हुए थे। यह मकान एक परिवार के रहने के मतलब का था लेकिन इस मकान में कई परिवार रहते थे। इन लोगों के रहने की हालात बहुत ख़राब थे। इन लोगों के बीबी-बच्चे भी विभिन्न क्षेत्रों से अपने पति के साथ इन मकानों में रह रहे थे। और यह लोग अधिकतर मुस्लिम धर्म के मानने वाले थे। मील में काम करने वाले लोगों को दो कटरे दिए गए थे और एक कटरे में छः मकान होते हैं। यह सारे मकान एक समान थे और एक जैसे बनाए गए थे। इन मकानों में हर एक मकान लगभग 55 गज़ का होता था। अंदर सामने एक कमरा होता था, बाहर दाएं ओर एक छोटी-सी कोठरी थी। इन मकानों की छत पर भी एक कमरा होता था जो नीचे के सामने की ओर बने कमरे के बराबर होता था। ऊपर के मकान के ऊपर टीन की छत होती थी। जैसा कि ऊपर बताया गया है कि एक मकान में कई परिवार रहते थे तो इनको रहने में कितनी सहूलियत होती होगी।...

इस मील के आसपास का इलाक़ा जिस इलाक़े में बुनकर और लौहार रहते थे इस मील से प्रभावित था।

इन लोगों को प्रभावित करने का कारण इस मील से आने वाली आवाज़ थी। मील एक दिन में कई बार बोला करती थी। यानी इसमें से आवाज़ आया करती थी। इस मील से आने वाली आवाज़ भाप के इंजन की सीटी के समान होती थी। यह आवाज़ बहुत तेज़ होने के कारण कई किलोमीटर दूर से सुनी जा सकती थी। मील के पास के इलाक़े में जहां लौहार और कई दूसरे लोग रह रहे थे, यह लोग रात के खाने की हांडी मिट्टी से बने चूल्हे पर तब रखते थे जब दोपहर में मील से आवाज़ आया करती थी। ये वो लोग थे जो इस मील में काम करने वाले लोगों के अलावा इस इलाक़े में रह रहे थे। मील ने आसपास के लोगों को प्रभावित कर रखा था।...

जब 1947 में हिन्दुस्तान का बंटवारा हुआ तब हिन्दू और मुस्लिम के बीच लड़ाई छगड़े (झगड़े) होने लगे। चूंकि यह इलाक़ा मुस्लिम का था यहां भी लड़ाई के आसार ज़्यादा थे। लगभग 1950 तक दिल्ली क्लौथ मील का पतन हो चुका था। यह इलाक़ा भी लड़ाई की चपेट में आ गया जिसके कारण कई लोगों की जानें गईं और कई लोगों को यह देश छोड़कर पाकिस्तान जाना पड़ा। लोगों को अपने मकान और ज़मीनों को छोड़कर भागना पड़ा, कई लोगों को अपनी जान गवानी पड़ी। कई परिवार बिछड़ गए और जो भी बाक़ी रहे यहां से निकलने की ताक में लगे रहे। रेलगाड़ी बोर्डर तक आरंभ कर दी गई। ये लोग कई दिनों तक रेलवे स्टेशनों पर रेलगाड़ी के आने के इंतज़ार में बैठे रहे। भूखे-प्यासे और घबराए हुए यह लोग बड़ी-बड़ी चुनौतियों का सामना कर रहे थे। यह समय उन पर कितना भारी और दरदनाक (दर्दनाक) होगा।

यह लड़ाई छगड़ा एक साल तक चला। सब कुछ बर्बाद हो चुका था। घर के घर बेचिराग़ हो गए थे। इन घरों में कोई चिराग जलाने वाला नहीं रहा था। इस छगड़े में मील भी बर्बाद हो चुकी थी। आज भी इस मील का कुछ हिस्सा ऐसा बाक़ी है जिसे देखकर हमें ऐसा लगता है कि वह हमें उस समय या उस घड़ी को बता रहा है...

एक बड़ा अंश देने का मक़सद यह कि आप हमारे अरहम मियां की बात की अदाइगी के तरीक़े पर वाह-वाह कर सकें। उन्होंने डी.सी.एम. जाकर मुशाहिदा किया, आसपास के बुज़ुर्ग लोगों से बातचीत की और इतनी बारीक तफ़सील लिखी। घरों के खण्ड़र को देखकर और लोगों से बातचीत करके घर के नक़्शे के बारे में नक़्शा खींचा और अंदाज़े लगाए। वह वाक़यात के बारे में, जज़बात और हादसात के बारे में तसव्वुर ही नहीं कर पाते हैं बल्कि उस बारे में अच्छी तफ़सील लिख पाते हैं। देश की तक़सीम के बारे में जो उन्होंने अपने तास्सुरात बयान किया है वह उनके ख़्याल और तसव्वुर की उड़ान दिखाता है। इस मज़मून को और बेहतर बनाने के लिए इसमें जिस बारीकी से हालात और चीज़ों की तफ़सील बयान की है, उसी बारीकी से वक़्त के साथ बदलाव पिरोने की कोशिश हो सकती है। इसी के साथ-साथ जिन लोगों से उन्होंने बातचीत की है, उनका ताअरुफ़ और मिल से उनके ताल्लुक़ के बारे में लिखा जा सकता है।

आपको क्या लगता है कि इतने कम वक़्त में हमारे अरहम मियां ने कैसा इतिहास रचा? ऊपर दिए गए मेरे ख़यालात शायद मूल्यांकन ही कहलाएंगे। बल्कि यूं ही कहा जा सकता है कि मूल्यांकन किसी अलग-थलग से दस्तूर का नाम नहीं है। ऊपर दी गई प्रक्रिया में तो वह सीखने, जानकारी इकट्ठा करने, लिखने के साथ-साथ ही चलता रहा। बच्चा और टीचर आपस में बातचीत, राय-मशवरा तो कर ही रहे थे। लेख सुधारने के या फिर इस पेशकश को और मज़बूती देने के कुछ तरीक़े तो सुझाए हैं, लेकिन यह भी सच है कि अगर हम लोग बच्चों के साथ ज़्यादा वक़्त बिता पाते तो इससे कहीं बेतहर काम मुमकिन था। जैसे हमारे अरहम ने अपने लेख में तकसीम की तकलीफ़ बयान की है। अगर उन्हें ज्ञानेन्द्र पाण्डे की किताब 'रिमेम्बरिंग पार्टिशन' में पुराने क़िले के पास लगे कैम्पों का बयान पढ़ने को दिया जाता तो वो कहीं बेहतर कड़ियां जोड़ सकते थे। इसी तरह उन्हें तक़सीम से जुड़े और स्रोतों और कहानियों से अवगत करवाया जा सकता था। भला बताइए कि जिन बच्चों ने कभी इस तरह का काम न किया हो, वह ज़रा सा सहारा मिलने पर इतना बेहतरीन काम कर सकते हैं। यह सब देखकर महसूस होता है कि हम खुद या शिक्षा तंत्र ही बच्चों

के पिछड़ेपन के लिए ज़िम्मेदार हैं। बहुत से इसी जमात के बच्चे ऐसे हैं जिनके पास तसव्वुर भी है और जज़्बा भी लेकिन लिखने के कौशल से मजबूर हैं। हम उन्हें दस साल में इतना भी नहीं सिखा पाए, कुसूर किसका है?

यह लिखते हुए शर्मिंदगी का एहसास हो रहा है कि वे बच्चे जिन्हें स्कूल के इतिहास के बारे में लिखना था अपने काम को एक लेख की शक्ल नहीं दे पाए। यह बच्चे मेरे साथ काम कर रहे थे। शायद मैंने बच्चों को बहुत साफ़ और सिलसिलेवार क़दम नहीं बताए जिसकी इस उम्र के बच्चों को ज़रूरत होती है। इस इशारे और सहूलियत की भी कमी रही कि अगर पुराने प्रधानाचार्य से बातचीत करनी है तो मुझे ही उनसे इजाज़त लेनी होगी और वक़्त तय करना होगा। कई बार हम इंतज़ाम और सिलसिलेवार क़दमों को एहमियत नहीं देते हैं तो काम उस अंजाम तक नहीं पहुंच पाता जो हम सोचते हैं। यह भी वजह रही कि मैं बाहर से जुड़े साथियों की सहूलियत के इंतेज़ाम में कुछ ज़्यादा मसरूफ़ हो गई। ख़ैर, बच्चों ने तारीख़ के स्रोतों के बारे में, जानकारी इक्ट्ठा करने के सिलसिले में बहुत कुछ सीखा और आस-पड़ौस से जानकारी भी इकट्ठा की।

आपको यह तो अंदाज़ा हो गया होगा कि इन तीन चीज़ों का आपस में जुड़ाव है- हम किसे इल्म क़रार दे रहे हैं, उस इल्म को बच्चों के साथ कैसे या किन तरीकों से बांट रहे हैं और उसका मूल्यांकन कैसे कर रहे हैं, मूल्यांकन का तरीक़ा अलग-थलग शय नहीं है, हमने क्या और कैसे पढ़ाया इस पर निर्भर है। नीचे दिए गए आंकने के तरीक़ों को ज़रा मुलाहेज़ा फ़रमाइए:

Unit Test 10 Marks Class - VII 26-8-13

प्र. 1 दिल्ली के सुल्तानों की भाषा क्या थी? 1

प्र. 2 इब्ने बतूता किस देश से भारत आया था? 1

प्र. 3 विधायक कौन होता है? उसका चुनाव किस प्रकार होता है? 2

प्र. 4 भूकंप के दौरान इमारतें क्यों गिरती है? 1

प्र. 5 मिलान करो 5

1. हिमनद	समुद्री तट
2. विसर्प	बर्फ़ की नदी
3. पुलिन	नदियां
4. बालू टिब्बा	पृथ्वी का कांपना
5. जल प्रपात	कठोर संस्तर शैल
6. भूकंप	रेगिस्तान

अब ज़रा दिल थामकर क्लास के भीतर झांकिए। यहां हमारी एक टीचर बच्चों को 'प्रोजेक्ट' करने का तरीक़ा सुझा रही हैं।

कक्षा - VII 17.7.13

टीचर (बच्चों से) - आपने मॉडल बनाने शुरू कर दिए?

बच्चेः (चुप रहते हैं।)

टीचरः इल्यास क्या है?

बच्चाः मैम, कैसे बनाना है?

टीचरः वो राजाओं, मोहम्मद तुग़लक, अलाउद्दीन खिलजी की तस्वीरें गूगल (google) से निकालकर काटकर चिपका देना और किसी एक का डिटेल (detail) में लिख देना। तुम अतीत की बुक ले आना फिर बता दूंगी। (इतिहास की किताब दिखाते हुए) ये जो थर्ड चैपटर है उसे थोड़ा बड़ा करके जीराक्स (Xerox) कराना और काटकर कोलाज बनाना। इसे ऐसे चिपका देना। (बोर्ड पर फोटो details) और एक तरफ़ सारी डिटेल लिखना ये 10 नम्बर का है। 5 बच्चे बना लेना ये। (थोड़ा रुककर) एक और बताया था कि मुहम्मद बिन तुग़लक, अलाउद्दीन ख़िजली, इल्तमश की तस्वीर काटकर कार्ड बोर्ड पर चिपकाकर किसी एक ही डिटेल लिखना। दो

हो गए। एक था कि हिस्टॉरिकल मानुमैन्टस, इसमें कुतुबमीनार का चित्र काटकर चिपकाना और उसके बारे में लिखना।

क्या आपको को भी महसूस हुआ कि एक माइने में हम बच्चों की ज़हानत और कौशल का गला घोंट रहे हैं। हर शेर के माइने संदर्भ से जोड़ने पर अलग मज़ा देता हैं। यहां तो मुझे मिर्ज़ा ग़ालिब का यह शेर याद आ रहा हैः

बक रहा हूं जुनूं में मैं क्या कुछ
कुछ न समझे खुदा करे कोई

सीखने-सिखाने की और मूल्यांकन की प्रक्रिया एक-दूसरे से जुदा नहीं है। सिलसिला और मक़सद एक ही है। आप ही बताइए बच्चों ने ऊपर दी गई प्रक्रिया से क्या सीखा होगा। 17.7.13 के कक्षा के नज़ारे के बारे में आपके क्या ख़याल हैं? काटने, कतरने, चिपकाने और किताब का लिखा टीपने से बच्चे कुछ तो ख़ैर सीखेंगे ही। इसकी तुलना आप पहले दी गई प्रक्रिया से कीजिए। हां, कक्षा के स्तर में फ़र्क ज़रूर है लेकिन फिर भी हम बच्चों के वक़्त और अक़्ल के साथ खिलवाड़ ही कर रहे हैं। बल्कि बच्चों की दक्षताओं और कौशल को एक मायने में पीछे ही धकेल रहे हैं। मज़े की बात यह है कि खिलवाड़ को हम साइन्सी जामा पहनाकर ऊंची गद्दी पर विराजमान कर देते हैं। अगर वालदैन में से कोई पूछने की जुर्रत कर ले तो 'अनपढ़ गंवारों' को हम यूं समझाएंगे। अब उन 'जाहिलों' की कहां हिम्मत की हम पढ़े-लिखों की नाप-तोल नम्बर, पैमाइश पर उंगली उठा पाएं।

IX - X

Formative Assessment 1	=	40=k10
Formative assessment 2	=	40-10
Summative Assessement -1	=	30 Item total 50 marks
Formative Assessment 3	=	40-10
Formative Assessment 4	CBSE (PSA) =	10
Summative Assessment - II	=	30 II Terms
		Total 50 marks

हम नवीं-दसवीं जिसमें मेहताब और अरहम पढ़ते हैं, उनका मूल्यांकन ऊपर दी गई तरतीब के हिसाब से करते हैं। फॉरमेटिव असेसमेंट के नाम पर हम टर्म में कई यूनिट टेस्ट लेते हैं। भारी-भरकम नाम और नम्बर काफ़ी हैं यह बताने के लिए कि हम तो भई अपना काम पूरी ईमानदारी, साईंसी तकनीक के हिसाब से कर रहे हैं। अब बच्चों के ज़हन डिबिया में बन्द हों तो बताइए हम क्या करें? नम्बर कहां ला पाते हैं कि हम उन्हें पास करें और कहें कि बच्चा ज़हीन है। यह भी सच है कि हम अपने टीचर पर भरोसा भी नहीं करते हैं कि वे गुणात्मक विश्लेषण कर सकें। शक भी बेबुनियाद नहीं है, हम उन्हें इसके लिए तैयार ही नहीं करते हैं। साथ ही क्या पढ़ाया जाए और कैसे पढ़ाया जाए सब मूल्यांकन नुमा छड़ी के इशारों पर नाचता है।

इससे पहले कि आप कहें, 'बक रही हो जुनूं में तुम क्या-क्या' मैं यह लेख यहीं ख़त्म करती हूं। फिर मुलाक़ात रहेगी। जाते-जाते यह कहना चाहूंगी कि क्लब फिर से शुरू करने का सोचा है, अनिल जी की तजवीज़ है। अपने बच्चों की जबान में कहूं तो, बस आप लोग दुआ करते रहिए, खुदा मदद करेगा। ◆

लेखिका परिचयः दिल्ली विश्वविद्यालय के लेडी श्रीराम कॉलेज में बीएलएड कोर्स से जुड़ी रही हैं। आजकल जामिया मिलिया इस्लामिया के शिक्षा विभाग में प्रोफेसर हैं।

आभारः
अनिल सेठीः अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सटी में इतिहास और इतिहास शिक्षा पढ़ाते हैं।
मीनाक्षी छाबड़ाः लैसले यूनिवर्सटी, अमरीका में तालीम पढ़ाती हैं।